सुख और सफलता के मूल सिद्धांत।

दयाचन्द्र गोयलीय

सद्विचार पुस्तक माला नं० ४

सुख और सफलता के मूल सिद्धांत

श्रीयुत जेम्स एलन के "Foundation Stones to Happiness and success" नामक पुस्तक का अनुवाद।

अनुवादक—

श्रीयुत बाबू दयाचन्द्र जी गोयलीय, बी. ए.

प्रकाशक

हिंदी साहित्य-भंडार, लखनऊ।
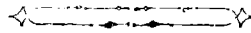
प्रथमावृत्ति] अक्तूबर १९१७ [मूल्य =)॥

Printed by C M Dayal, at the Anglo-Arabic Press, Kutchery Road, Lucknow

निवेदन।

विदेशों में श्रीयुत जेम्स एलन की पुस्तकों का कितना आदर है इसका अनुमान इससे किया जा सकता है कि वहाँ उनकी प्रत्येक पुस्तक की कई हजार प्रतियाँ बिक चुकी है। सौभाग्य से अँग्रेजी दाँ भारतवासी भी उनके ग्रंथों से अब लाभ उठाने लगे है, परंतु दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि हिंदी में उनकी पुस्तकों का अभी तक अनुवाद बहुत कम हुआ है, जिससे हिंदी जाननेवाले उनकी शिक्षाओं से वंचित रहते है। इसी कमी को दूर करने के लिये हमने उनकी पुस्तकों को प्रकाशित करना प्रारम्भ किया है। यह चौथी पुस्तक है।

जिस प्रकार मनुष्य मकान के बनाने से पहिले उसका नक़शा बना लेता है और फिर बिलकुल उसके अनुसार मकान बनवाता रहता है, पहले जमीन को नाप तोल कर मकान की नीव डालता है, फिर उस पर इमारत खड़ी करता है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य को पहले अपने जीवन के उद्देश्य बना लेने चाहिये और फिर उनको दृष्टि के सामने रखते हुए उनकी प्राप्ति के उपायों को निरंतर उपयोग मे लाना चाहिये और प्रत्येक कार्य नियमानुकूल करना चाहिये। सुख और सफलता प्राप्त करना प्रत्येक मनुष्य का अभीष्ट है, इसी लिये इस पुस्तक में सुख और सफलता के सिद्धांतो का संक्षेप में वर्णन किया गया है। भारत-वासियों के लिये यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। हमें आशा है कि हिंदी भाषा भाषी इस पुस्तक से यथेष्ट लाभ उठावेंगे।

दयाचन्द्र गोयलीय

लखनऊ।

सदुपदेश

उत्तमता के काज सो, उत्तमता बढ़ि जात ।
नेकी कारक जन सदा, अधिक नेक ह्वै जात ॥
नित प्रयोग उपयोग सो, अधिक योगता होत ।
नेकी नीति सुकर्म को, दिन दिन बढ़त उदोत ॥

अन्तरात्मा माहि बसत सत्ता सुतन्त्र की ।
अनुसंधानी जन पावत नहँ खोज मंत्र की ॥
जन निज मन ही के कारन दासताधिकारी ।
मन ही के बल होत प्रबल विरदावलिधारी ॥
सब स्वर्ग नर्क पाताल महँ चहुँ दिशही जीव समाज को ।
सुख दुःख सदा फल बनत है कारज अपने आप को

विषय सूची

सुख और सफलता के मूल सिद्धांत

१--सदुद्देश्य।

इस बात का जानना बुद्धिमानी है कि कौन सा काम पहले करना उचित है और उसके लिये कौन सा उपाय पहले काम में लाना चाहिए। किसी काम को बिना सोचे विचारे शुरू कर देना, उसे भी शुरू से नियमानुसार न करके बीच से करना अथवा अंत से करना असफलता का चिह्न है। जो काम शुरू से नियमानुसार किया जाता है, उसी में सफलता होती है। विद्यार्थी पहले पहल ही बीजगणित और रेखागणित के प्रश्नों को हल नहीं कर सकता। शुरू में उसे गिनती सीखनी पड़ती है और वर्णमाला का अभ्यास करना पड़ता है। धीरे धीरे कुछ काल के बाद उसमें बीजगणित और ज्योमिति के समझने की शक्ति आ जाती है। जितने ज्ञानी ध्यानी पुरुष तुम देखते हो, उन्होंने इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये वर्षों धैर्य के साथ अभ्यास किया है और जनता के अनुभव से लाभ उठाया है। निशाना वही मनुष्य ठीक लगा सकेगा, जो निशाने की ओर अपनी दृष्टि रखता है और उचित

स्थान से निशाना लगाता है। इसी प्रकार कार्य व्यवहार में उन्हीं लोगो को सफलता होती है जो नियमानुसार कार्य करते हैं। जो लोग अनियम काम करते है वे अधिक श्रम करने पर भी असफल रहते हैं।

अतएव जीवन में सुख और सफलता प्राप्त करने के लिये सबसे पहली आवश्यक बात यह है कि मनुष्य के सद् उद्देश्य होने चाहियें। बिना सद् उद्देश्यो के कोई काम भी ठीक नहीं होगा और जीवन दुःख और अशांति से व्यतीत होगा। दुनिया में जितना लेन देन होता है, और जितने बंक और कारखाने चलते हैं, सबका काम हिसाब किताब पर निर्भर है। हिसाब क्या है? केवल एक से लेकर दस तक की संख्या का हेर फेर है। इन्हीं संख्याओ के हेरफेर से लाखो और करोड़ो का हिसाब किताब होता है। दुनिया में जितनी किताबे है, जितना साहित्य है और जितने विचार हैं वे सब वर्णमाला के अक्षरो से निकले हैं अर्थात् उन्हीं अक्षरो को हेर फेर कर इतनी पुस्तकें और इतना साहित्य बन गया है। बड़े से बड़ा ज्योतिषी भी पहली दस संख्याओं को नहीं भूल सकता। बड़े से बड़ा विद्वान् भी वर्णमाला के अक्षरों को नहीं भूल सकता। यद्यपि प्रत्येक वस्तु में मुख्य और मौलिक सिद्धांत बहुत कम और साधारण होते है, तथापि उनके बिना काम नही चल सकता और कुछ लाभ नही हो सकता। मनुष्य के जीवन में भी मुख्य सिद्धांत बहुत कम है और सरल है। उनको अच्छी तरह से जानने और इस बात का अध्ययन करने से कि किस प्रकार जीवन की घटनाओ मे उनका उपयोग किया जाता है. अशांति दूर होती है, अजय और अक्षय चरित्र का दृढ़ रूप से संगठन होता है और स्थाई सफलता प्राप्त होती है।

जिस समय मनुष्य उक्त सिद्धांतो को भली भाँति जान लेता है, जीवन की भिन्न भिन्न अवस्थाओ मे उनका उपयोग करने लगता है और उसका चरित्र संगठित हो जाता है, उस समय उसका जीवन विजयी बन जाता है अर्थात् वह अपने जीवन का सर्वाधिकार सम्पन्न स्वामी बन जाता है।

जीवन के प्रथम और मौलिक सिद्धांत चरित्र से सम्बंध रखनेवाले कुछ सद्गुण है। उनका बतला देना सहज है। नित्य प्रति वे लोगो की जिह्वा पर रहते है, परंतु उनको व्यवहार मे लाना और उनके अनुसार प्रवृत्ति करना बहुत कम लोगो को मालूम है। यहाँ पर हम उनमें से केवल पाँच का उल्लेख करेंगे। यद्यपि जीवन के मौलिक सिद्धांतो में वे सबसे सरल है, परंतु क्या कारीगर, क्या दूकानदार, क्या अमीर और क्या ग़रीब प्रत्येक मनुष्य के जीवन में प्रति दिन उनका काम पड़ता है। उनमे से एक को भी नहीं छोड़ा जा सकता। जो मनुष्य उनको उपयोग मे लाना जान लेता है और उनके अनुसार चलने लगता है, वह जीवन की अनेक कठिनाइयो और आपत्तियो से निकल जाता है और विचारो की उन धाराओ में चला जाता है जो स्थाई सफलता के प्रदेशो की ओर शांति से बहती है। पहला सद्गुण कर्त्तव्य है।

कर्त्तव्य—यद्यपि यह शब्द बहुत पुराना हो गया है। प्रायः प्रत्येक मनुष्य प्रति दिन दो चार बार इसको जिह्वा पर लाता है, तथापि काम करनेवाले के लिये इसकी अत्यत आवश्यकता है। इसके अर्थ ये है कि अपने काम को अत्यंत श्रम के साथ जी जान से करना चाहिये, परतु साथ मे दूसरे के काम में तनिक भी हस्तक्षेप न करना चाहिये, अर्थात् दूसरे के काम की परवा न

करके अपने काम को जहाँ तक अच्छा हो सके करना चाहिये। जो मनुष्य निरंतर दूसरो को उपदेश देता रहता है और उन्हे काम की रीति बताता रहता है वह स्वयं अपने काम को बिलकुल नहीं कर सकता। उसका काम बिलकुल खराब रहता है। कर्त्तव्य के यह भी अर्थ है कि जिस काम को मनुष्य करे उसे एकाग्र-चित्त होकर करे। दूसरे काम का उस समय मन मे विचार भी न लावे। जितनी मनुष्य मे बुद्धि, योग्यता और चातुर्य हो वह सब उस काम के करने मे लगा दे। यद्यपि भिन्न भिन्न मनुष्यो के भिन्न भिन्न कर्त्तव्य होते है और प्रत्येक मनुष्य अपने कर्त्तव्य को अपने पडोसी के कर्त्तव्य की अपेक्षा भली भाँति जानता है तथापि सिद्धांत सदा एक होता है और सब के लिये एकसाँ होता है।

दूसरा सद्गुण ईमानदारी है। इससे यह मतलब है कि मन से, वचन से, काय से, किसी प्रकार भी दूसरे को धोका न दिया जाय। सदा सच्चाई और ईमानदारी को काम मे लाया जाय। जो कुछ मन में हो, वही बोलना चाहिये और जो कुछ बोलो वही मन मे होना चाहिये। धूर्तता और मायाचार को त्याग कर सरल और निष्कपट होना चाहिये। दूसरे के आगे कभी किसी अनुचित कार्य के लिये गिड़गिड़ाओ भी मत और न कभी किसी से अनुचित सहायता की आशा रक्खो। अपने काम से नाम पैदा करो और काम को ईमानदारी से करो, अवश्य सफलता होगी।

तीसरा सद्गुण मितव्ययिता अर्थात् किफ़ायतशारी है। इसका अभिप्राय यह है कि अपने समय को, द्रव्य को और

श्रम को सावधानी और बुद्धिमानी से व्यय करो अर्थात् उन्हें व्यर्थ में नष्ट न करो। फ़िज़ूल खर्ची करके भोग विलास और विषय वासना से, तन को, मन को और धन को नष्ट न करो। इस गुण से मनुष्य में बल, श्रम, साहस और योग्यता आती है।

उदारता—यह चौथा सिद्धांत है। उदारता और मितव्यय का विरोध नहीं है। सच पूछो तो वही मनुष्य उदार हो सकता जो संयमी और मितव्ययी होता है। जो मनुष्य अपने धन का अथवा श्रम का अथवा अपनी मानसिक शक्तियों का दुरुपयोग और व्यर्थ व्यय करता है उसके पास दूसरों को देने के लिये कुछ नहीं रहता। केवल किसी को धन देने का नाम ही उदारता नहीं है। यह तो बहुत ही नीचे दरजे की उदारता है। वास्तव में दूसरों को अपने विचारों से और कार्यों से लाभ पहुँचाने, उनके साथ सहानुभूति प्रकाशित करने और अपने विरोधियों और शत्रुओं तक के साथ दया का व्यवहार करने का नाम उदारता है। उदारता का प्रभाव बड़ा विशाल होता है। यह शत्रुओं को मित्र बना देती है और निराशा का काला मुँह कर देती है।

इंद्रिय पराजय—यह पाँचवाँ और सबसे पिछला सिद्धांत है, परंतु सबसे ज़्यादा ज़रूरी है। इसके अभाव से न जाने संसार में कितने दुःख और कितनी आपत्तियाँ आती है। मानसिक, शारीरिक और आर्थिक सभी प्रकार के कष्ट मनुष्य को सताते है। जो दुकानदार तनिक सी बात पर अपने ग्राहक से बिगड़ बैठता है, उसे कभी सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। उसके काम में कभी उन्नति नहीं हो सकती। यदि दुनिया के सब आदमी इन्द्रियपराजय की प्राथमिक अवस्था

में भी आ जायँ अर्थात् तनिक भी अपनी इन्द्रियों को अपने वश में करने का अभ्यास करने लगें, तो दुनिया से क्रोध का नाम निशान मिट जाय। यद्यपि प्रेम, संतोष, सभ्यता, दृढ़ता, नम्रता और पवित्रता आदि गुण जो इन्द्रिय-पराजय के अन्तर्गत हैं, लोग धीरे धीरे सीख सकते हैं, तथापि जब तक उनको अच्छी तरह से नहीं सीख लिया जाता, तब तक मनुष्य का चरित्र संगठित नहीं होता और सफलता प्राप्त नहीं होती। जो मनुष्य अपने मन को और अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर लेता है उसे एक बड़ा मनुष्य समझना चाहिये। साधारण मनुष्यों में उसकी गणना नहीं की जा सकती।

ये पाँच सिद्धांत ज्ञान-प्राप्ति के पाँच द्वार और सफलता के पाँच मार्ग हैं, परंतु केवल इनके नाम उच्चारण करने से अथवा इनके गुण गान करने से कोई लाभ नहीं। लाभ इनके जानने और इनके अभ्यास करने में है। अतएव जिस मनुष्य को सुख और सफलता की अभिलाषा है, उसे इन पाँचों सिद्धांतों का निरंतर मनन और अभ्यास करना चाहिये। केवल कह कर ही नहीं, किन्तु करके दिखला देना चाहिये।

२—सफलता की प्राप्ति के उपाय।

जो अन्तर एक लकड़ी के लट्टू और एक चलती हुई मशीन में है, अथवा एक बंद घड़ी और चलती हुई घड़ी में है, वही अन्तर सच्चे जीवन और झूठे जीवन में है। जिस प्रकार मशीन उसी समय तक उपयोगी और लाभदायक है, जब तक वह बराबर नियमित रूप से चलती है, और उसके तमाम पुरजे ठीक ठीक काम करते हैं, उसी प्रकार जीवन उसी समय तक सुंदर और उपयोगी है, जब तक उसके सम्पूर्ण अंग उत्तम रीति से नियमानुसार काम करते हैं। जिस मनुष्य का जीवन किसी नियम पर निर्धारित नहीं, जिस जीवन में शांति और समता नहीं, वह जीवन निष्फल है। ऐसे जीवन को हम सच्चा जीवन नहीं कहते। वह झूठा और निस्सार है। अतएव यदि सच्चे जीवन की अभिलाषा है, तो नियमानुसार जीवन व्यतीत करना चाहिये। जिस प्रकार संसार एक नियम पर निर्धारित है, और उसमें प्रत्येक कार्य नियमानुसार होता है, उसी प्रकार मनुष्य को अपना जीवन नियमित बनाना चाहिये, अर्थात् अपने जीवन की प्रत्येक घटना का विचार रखना चाहिये। मूर्ख और बुद्धिमान मनुष्य में यही अन्तर है कि बुद्धिमान मनुष्य छोटी छोटी बातों की ओर भी पूरा पूरा ध्यान रखता है, परन्तु मूर्ख मनुष्य उनकी कोई परवा नहीं करता। बुद्धि इस बात के लिये प्रेरणा

करती है कि छोटी से छोटी चीज़ भी नियत स्थान पर रक्खी जाय और उसकी पूरी पूरी सावधानी की जाय। नियम का उल्लंघन करना नियमानुसार काम न करना दुख और आपत्ति का मोल लेना है।

अच्छा दुकानदार इस बात को अच्छी तरह से जानता है कि नियमानुसार काम करने में उन्नीस बिस्वे सफलता है और अनियमित रूप से काम करने में असफलता ही असफलता है। बुद्धिमान मनुष्य जानता है कि नियमानुसार जीवन व्यतीत करने मे तीन हिस्से सुख है और अनियम करने में दुख ही दुख है। मूर्ख कौन है? वह मनुष्य जिसके विचार, शब्द और कार्य असावधानी से होते हैं, जिसको अपने मन वचन काय के योग का विचार नही होता, अर्थात् जिसे इस बात का बोध नहीं होता कि मैं क्या विचार रहा हूँ, क्या बोल रहा हूँ और क्या कर रहा हूँ। बुद्धिमान मनुष्य कौन है? वह जिसके विचार, शब्द और कार्य सावधानी पूर्वक होते है, अर्थात् जो सोच समझ कर बोलता, विचार करता और काम करता है। वह एक शब्द भी अपने मुख से बिना सोचे समझे नहीं निकालता। उसका प्रत्येक शब्द ऊँचा तुला होता है।

केवल स्थूल पदार्थों के ठीक तौर से धरने, उठाने पर ही सच्चे मार्ग की इतिश्री नहीं समझना चाहिये। यहाँ से तो आरम्भ होता है। मन को वश में रखने, कषायो और वासनाओ को शमन करने, सोच समझ कर मुख से शब्द निकालने और विचारो को समीचीन रूप से तरतीब देने और सद्कार्यों को पसंद करने की आवश्यकता है। दृढ़ और समीचीन उपायो के

द्वारा जीवन को सुखी और स्वस्थ बनाने के लिए मनुष्य को उचित है कि प्रति दिन काम में आनेवाली छोटी छोटी चीज़ों की ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खे । यहाँ तक कि खाने पीने सोने और उठने बैठने का समय नियत होना चाहिये । जो समय भोजन करने का है, सदा उसी समय पर भोजन करो और जो समय सोने का है, सदा उसी समय पर शयन करो । नियत समय पर भोजन न करने से पाचन शक्ति बिगड़ जाती है, शरीर रुग्ण हो जाता है और उसके कारण मनुष्य का मन भी स्वस्थ नहीं रहता । शरीर का प्रभाव मन पर और मन का शरीर पर सदैव पड़ता रहता है । नियत समय पर भोजन करने से शरीर भी स्वस्थ रहता है और मन भी स्वस्थ रहता है । अतएव जीवन को सुखी रखने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि प्रत्येक काम के लिए समय नियत हो और जो समय जिस काम के लिए नियुक्त हो, उसमे वही काम करना चाहिये । खेल के समय खेल और आराम के समय आराम करना चाहिए । अन्यथा मनुष्य को कभी भी सुख नही मिल सकता और न कभी उसे अवकाश मिल सकता है । न कभी उसका काम पूरा होगा और न कभी उसे आराम करने का समय मिलेगा । वह सदा समय की शिकायत करता रहेगा, परन्तु इसके विपरीति जो मनुष्य नियत समय पर हर एक काम को करेगा, वह काम भी कर लेगा और समय भी उसे मिल जायगा ।

परन्तु ये बातें भी शुरू की बातें है । इन पर भी हमें संतोष नहीं करना चाहिये । हमें अपने शब्दो, कार्यों, विचारो और इच्छाओ को नियमित रखना चाहिए । तभी मूर्खता से बुद्धिमानी

का और निर्बलता से प्रबलता का विकास होगा। जब मनुष्य अपने मन को इस प्रकार साध लेता है कि उसके प्रत्येक भाग में समता और सहानुभूति पैदा हो जाती है, तब वह परम सुख, श्रेष्ठ बुद्धि और उच्चतम योग्यता को प्राप्त कर लेता है। परन्तु यह अंतिम और अभीष्ट अवस्था है। इस अवस्था को प्राप्त करने के लिये मनुष्य को प्राथमिक अवस्था से आरम्भ करना चाहिये। शुरू से प्रत्येक कार्य को धीरे धीरे नियमानुसार करते हुए और दिन दिन आगे बढ़ते हुए अभीष्ट स्थान पर पहुँचना चाहिये। ज्यो ज्यो मनुष्य आगे बढ़ता जायगा और उन्नति करेगा त्यो त्यो उसका बल बढ़ेगा और उसे आनंद मिलेगा।

कहने का सारांश यह है कि नियमानुसार काम करने से शक्ति और योग्यता उत्पन्न होती है और मनको वश में करने से बल और आनंद की प्राप्ति होती है। नियमानुसार काम करना और नियमानुसार जीवन को बनाना यही मनुष्य का उद्देश्य होना चाहिए।

अतएव जो कुछ करो, नियमानुसार करो, जो कुछ कहो ठीक ठीक कहो और जो कुछ सोचो युक्तिपूर्वक सोचो। इसी में सफलता है। बोलने, सोचने और काम करने के दृढ़ और समीचीन उपायो को ग्रहण करना दीर्घ स्वास्थ, अक्षय सफलता और अटल शाँति का मूल है, अर्थात् मन, बचन, काय के वश में रखने और उनसे ठीक ठीक काम लेने से स्वास्थ, सफलता और शांति का निश्चय से लाभ होता है।

३--सुकार्य ।

जो मनुष्य सद् उद्देश्य बना कर नियमानुसार काम करता है, उसे शीघ्र इस बात का पता लग जायगा कि सुकार्यों की ओर से मनुष्य को असावधान नहीं होना चाहिये । उसे निरंतर इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि कौन सा काम अच्छा है और कौन सा बुरा । जितना उसको इस बात का ज्ञान होता जायगा, उतना ही उसका जीवन-मार्ग सरल और निष्कटक होता जायगा और उसका समय शांति से व्यतीत होगा। ऐसा मनुष्य तमाम बातों में सीधे मार्ग का अनुगामी होता है । वह निर्भय होकर अपना काम करता रहता है । बाह्य शक्तियों का उस पर कोई असर नहीं होता । जिस मार्ग का वह अवलम्बन कर लेता है, बस उसी पर आरूढ़ रहता है । इससे यह न समझना चाहिये कि वह अपने सम्बन्धियों और निकटवर्तियों के सुख दुख की कोई चिंता नहीं करता । यह दूसरी बात है । हाँ, यह अवश्य है कि वह उनके विचारों, उनकी अज्ञानता और उनकी इच्छाओं की परवा नहीं करता । सुकार्यों से वास्तव में यह तात्पर्य है कि दूसरों के साथ सद्व्यवहार किया जाय । सद्व्यवहार करने वाला मनुष्य जानता है कि सुकार्य केवल दूसरों के लाभ के लिये है और वह बराबर उन्हें किये जाता है, चाहे वे लोग उसके साथ उल्टा व्यवहार क्यों न करें । वह अनेक कष्टों और बाधाओं के आने पर भी अपने मार्ग से च्युत नहीं होता । चाहे संसार

उसकी बुराई करे, उसके साथ बुरा व्यवहार करे, परन्तु वह सबके साथ भलाई का व्यवहार करता है।

जो लोग बुरे कामों को छोड़कर भले काम करना चाहते हैं, वे भले और बुरे कामो को आसानी से पहिचान सकते हैं। जिस तरह स्थूल जगत् मे पदार्थो के रूप, रस, वर्ण आदि गुणो से उनकी पहिचान की जाती है, और जो उपयोगी और लाभ-दायक समझा जाता है वह ग्रहण किया जाता है, उसी प्रकार आत्मिक जगत् में भले और बुरे कामो को उनके गुण, स्वभाव और प्रभाव से पहिचाना जा सकता है और जो उत्तम और उपयोगी हो वे ग्रहण किये जा सकते है। उन्नति के जितने काम हैं उनमे पहले बुरी बातो के त्याग करने की कोशिश करनी चाहिये। पीछे अच्छी बातों को ग्रहण करना चाहिये। बालक को जब बार बार उसकी ग़लतियाँ बताई जाती है तब वह ठीक पढ़ना सीखता है। जब तक आदमी को इस बात का ज्ञान न हो कि कौन चीज बुरी है और किस प्रकार उससे बचना चाहिये, तब तक वह अच्छी बातो को नहीं जान सकता और न उनके करने का अभ्यास कर सकता है। बुरे काम वे है, जो केवल स्वार्थ-वश किये जाते है, जिन मे दूसरे के हित वा लाभ की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। ऐसे काम कुत्सित विचारों और अनुचित इच्छाओ के कारण होते है और करनेवाले के दिल मे सदा उनके छिपाने का ख़याल रहता है, कारण कि वह डरता रहता है कि कहीं इनका परिणाम बुरा निकले और लोक में निंदा हो। इसके विपरीत अच्छे काम वे है जिनमे दूसरो के हित और लाभ का ध्यान रक्खा जाता है। ऐसे काम शांति और सद्विचारो के कारण होते हैं। उनके करने में करनेवाले को

तनिक भी लज्जा नहीं आती और न इस बात का भय होता है कि उनका क्या परिणाम होगा ।

ऐसे कार्य जिनमें स्वार्थ साधन होता है, परंतु दूसरो को दुःख और हानि पहुँचती है, चाहे वे कैसे और कितने ही आवश्यक क्यो न हो, अच्छे काम करनेवाला मनुष्य उनको कभी नहीं करता। वह केवल उन्हीं कामो को करता है, जिनमें दूसरो का हित हो । सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने के लिये और निःस्वार्थ काम करने के लिये स्वार्थ की आहुति देनी पड़ती है। वह निरन्तर अपनी कषायो को मन्द करने का प्रयत्न करता रहता है और इस बात का अभ्यास करता है कि क्रोध के आवेश में किसी को कोई अपशब्द न कहे और न कोई अनुचित कार्य करे। वह सदा इन्द्रियो को अपने वश करने और चित्त को शांत रखने का उद्योग करता रहता है। स्वार्थ-साधन के लिये छल, कपट और मायाचार के विचार को वह कभी मन मे स्थान भी नहीं देता। सच पूछो तो छल कपट का विचार करना उसके लिये उतना ही कठिन है, जितना साधारण मनुष्यो के लिये सरल है। जिस काम को मनुष्य करके छिपाना चाहता है, जिस के प्रगट करने में उसे लज्जा आती है अथवा सकोच होता है अथवा समय पड़ने पर जिसका वह समर्थन नहीं कर सकता, समझना चाहिये कि वह बुरा काम है। बुरे काम की यही पहिचान है। अच्छे काम के करने मे अथवा उसके प्रगट हो जाने में मनुष्य को कभी भय नहीं होता। अतएव बुरे काम को पहिचान कर उससे बचना चाहिये और उसका विचार भी मन में न लाना चाहिये।

इस प्रकार ईमानदारी के साथ अच्छे काम करने से मनुष्य

को अच्छे काम करने का अभ्यास हो जायगा और उन बातो से बच जायगा जिनके कारण दूसरे लोग उसको अपने माया जाल में फाँस लेते हैं। वह कभी दूसरो के जाल में नहीं फँसेगा। यहाँ तक कि यदि कोई आदमी कभी उससे किसी काग़ज़ पर हस्ताक्षर करने अथवा किसी बात का वचन देने को कहेगा, तो वह केवल उसके कहने में आकर ऐसा करने को कभी तैयार नहीं होगा। पहले वह हर एक बात पर अच्छी तरह से विचार करेगा, उसकी बुराई भलाई को सोचेगा, पीछे उसके विषय में हाँ या ना करेगा। सहसा बिना विचारे वह किसी काम के लिये तैयार नहीं होगा। विचार करने के बाद जिस बात को अच्छा समझेगा, जिसमे अपना तथा दूसरो का हित देखेगा, उसे करेगा और जब काम को शुरू कर देगा तब स्वयं अपने को उसका ज़िम्मेदार समझेगा। वह केवल दूसरो की बातो में आ कर किसी काम को नहीं कर बैठता और न कभी किसी बात की शिकायत करता है कि क्या करूँ, उनके बहकावे में आकर ऐसा कर बैठा, कारण कि वह जिस काम को करता है, पूर्ण विचार करके करता है। उसका कोई काम बिना विचारे नहीं होता। दुनिया में हजारो काम बिना विचार के अपूर्ण रह जाते हैं। निःसंदेह वे अच्छे भावो से किये जाते है, परन्तु विचार पूर्वक नहीं किये जाते, इसी कारण उनमें सफलता नहीं होती। अतएव जिस काम को करो विचार पूर्वक करो। इस लोकोक्ति को कभी मत भूलो कि 'मनुष्य को साँपकी तरह बुद्धिमान और बतख की तरह सरल होना चाहिये'।

जितना मनुष्य अधिक विचार करता, है उतनी ही अधिक उसमें अच्छा काम करने की शक्ति आती है, यहाँ तक कि कुछ

समय के बाद अच्छा काम करना उसका स्वभाव हो जाता है। विचारशील मनुष्य कभी मूर्खता से काम नहीं करता, वह जिस काम को करता है, बुद्धिमानी से करता है। यह न समझना चाहिए कि जो काम अच्छे भाव से किया जाता है, वह अच्छा ही होगा। अच्छा काम वही है जो पूर्ण विचार के साथ किया जाता है। दुनिया मे वही मनुष्य सुखी रह सकता है और दूसरो को लाभ पहुँचा सकता है जो अच्छे काम करता है। दुनिया में धूर्त्त, मायाचारी मनुष्यो की बाहुल्यता है। वे धूर्त्तता का जाल फैला कर इस प्रकार लोगो को अपने चुंगल में फँसा लेते हैं कि वे बिना विचार किये काम कर बैठते हैं और अन्त में पश्चात्ताप करते है कि हाय! हम धोके में आ गये। हमने तो बहुत अच्छे भावो मे काम शुरू किया था, परन्तु क्या करें, अमुक मनुष्य ने धोका दिया। अस्तु, अब भविष्य में अधिक विचार से काम करेंगे।

उत्तम काम सदा उत्तम विचारो से होते है, अतएव जब मनुष्य अच्छे और बुरे कामो में पहिचान करता है तो वह अपने मन को विशुद्ध करता है और ज्यो ज्यों उसका मन विशुद्ध होता है, त्यो त्यो वह इस बात का अनुभव करता जाता है कि कि मेरा चरित्र और जीवन ऐसी मजबूत चट्टान पर बना हुआ है कि जिसे असफलता की सख़्त से सख़्त आँधी भी नहीं गिरा सकती और न कोई हानि पहुँचा सकती है।

४—सुवचन।

त्य का ज्ञान केवल अभ्यास से होता है। जब तक हृदय विशुद्ध न हो तब तक सत्य का ज्ञान नहीं हो सकता और हृदय की विशुद्धि के लिये सब से पहले सत्य वचन बोलने चाहियें। झूठ पाप और मायाचार का सर्वथा त्याग कर देना चाहिये। जब तक मनुष्य झूठ का त्याग नहीं करता और दूसरों की निंदा करता है तथा अपने मुख से अपशब्द निकालता रहता है तब तक उसके हृदय में आत्मिक ज्ञान का अंश भी नहीं आता। झूठा आदमी अंधकार में डूबा रहता है। वह भलाई और बुराई में पहिचान भी नहीं कर सकता। उल्टा वह अपने दिल में यह समझता है कि झूठ बोलना और बुराई करना जरूरी है। इनसे उसकी तथा दूसरों की रक्षा होती है।

जिस मनुष्य को उच्च ज्ञान प्राप्त करना है, अपने हृदय को विशुद्ध बनाना है, उसे उचित है कि अपने विषय में सत्य ज्ञान रक्खे। यदि वह झूठ बोलता है, दूसरों से ईर्ष्या द्वेष रखता है, उनकी निंदा करता है और उनके प्रति कटु शब्दों का व्यवहार करता है, तो समझना चाहिये कि अभी तक उसने उच्च ज्ञान प्राप्त करना प्रारम्भ भी नहीं किया है। चाहे वह कैसा ही तत्ववेत्ता हो, ज्योतिष शास्त्र में कितना ही निपुण हो और जंत्र मंत्र विद्या में चतुर हो, यदि वह झूठा है और दूसरों की निंदा करता है,

तो वह उच्च-जीवन से कोसो दूर है। उच्च जीवन के लिये किन बातो की आवश्यकता है? प्रेम, शील, सतोश, हर्ष, सरलता, नम्रता, सभ्यता, सत्यता, पवित्रता, दयालुता और निस्स्वार्थता की, और जो मनुष्य इन गुणों को अपनाना जानता है उसे उचित है कि इनका अभ्यास करे। इसके सिवाय और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

झूठ बोलते हुए और दूसरो की निंदा करते हुए कोई मनुष्य आत्मोन्नति नहीं करसकता। स्वार्थपरता और ईर्ष्या द्वेष के कारण ही मनुष्य झूठ बोलता है और दूसरो की निंदा करता है।

पर-निंदा झूठ के समान ही किसी अंश में उससे भी बढ़कर है, कारण कि परनिंदा के साथ क्रोध का आवेश रहता है। जो मनुष्य दूसरे की निंदा करता है, वह अवश्य उसके प्रति द्वेष भाव रखता है। निंदा करनेवाला मनुष्य ऊपर से अपने को ऐसा निर्दोष प्रगट करता है और अपने कथन को ऐसा बना कर कहता है कि कितने ही भोले भाले मनुष्य उसके जाल में फँस जाते है। जो आदमी भूल कर भी झूठ नहीं बोलते, वे भी उसकी बातो मे आ जाते हैं और उनको सच समझ बैठते हैं। वह न केवल अपने आप बुराई में पड़ता है, किंतु सुननेवाले को भी पाप पकज में डालता है। झूठ का बोलना भी उतना ही बुरा है, जितना झूठ का सुनना, कारण कि जब तक सुननेवाला न हो तब तक बोलनेवाला कुछ नहीं कर सकता। उसके वचनो का उसी समय असर होगा कि जब वे किसी के कान में पड़ेंगे। अतएव जो मनुष्य दूसरे के मुँह से किसी की निंदा सुनता है और सुन कर उस पर विश्वास करता है और तदनुसार उसके

प्रति द्वेष भाव रखता है तो उसमें और निंदा करनेवाले में कोई अन्तर नहीं रहता। वह उसके समान ही द्वेषी है। यदि कुछ अंतर है, तो केवल यह कि निंदा करनेवाला मनुष्य खुले मैदान बुराई करता है और निंदा सुननेवाला चुपके चुपके बुराई करता है। बुराई के फैलाने में दोनों बराबर हैं।

दूसरे की निंदा करना, अपवाद करना यद्यपि एक साधारण बात है, परन्तु बड़ी हानिकर है। दूसरो के विषय में प्रायः लोग भूल और नासमझी से झूठी राय बना लिया करते हैं। प्रति दिन देखने में आता है कि बहुत से लोग बिना विचारे समझ बैठते है कि अमुक मनुष्य ने हमारी मान-हानि की, हमें अपशब्द कहे, इस कारण उनके क्रोध का कोई पारावार नहीं रहता। केवल इतना ही नहीं, किंतु तीव्र क्रोध के कारण वे चाहे जिसके आगे अपने क्रोध को प्रगट करने और कहने लगते है कि देखो उसने हमारे साथ कैसा बुरा व्यवहार किया, हमें कैसे अपशब्द कहे। यदि कहनेवाले ने दो शब्द कहे होंगे, तो वे बढ़ाकर चार बनाते है। भावार्थ कहनेवाले के अभि-प्राय को न समझ कर क्रोधवश जो कुछ मन में आता है, कह बैठते है। सुनने वाले क्या करते हैं? वे समझते है कि वास्तव में उसने बहुत बुरा किया। जो कुछ ये कहते है सच कहते है। बस, उस मनुष्य के विषय में वे अपनी राय केवल कहनेवालो के अनुसार ही बना लेते है। उसने वास्तव मे किस अभिप्राय से बात कही थी और वह अपने बचाव में क्या कहता है, इसकी तरफ़ उनका ध्यान भी नहीं जाता। वे एकतरफ़ा डिगरी दे देते है। झट उनकी बात पर विश्वास कर लेते हैं और वे भी

चाहे जिसके आगे उस बात को दोहराने लगते हैं। परिणाम यह होता है कि बात का बतंगड़ बन जाता है और राई का पहाड़ हो जाता है। अब जितने मुँह उतनी ही बातें हो जाती हैं, कारण कि जो कोई कहता है वह अपनी तरफ़ से नमक मिर्च मिलाए बिना नहीं रहता। ज्यों का त्यो कोई कह नहीं सकता। चाहे किसी की स्मरण शक्ति कितनी ही तेज़ हो, वह भी जब कोई सुनी हुई बात किसी से कहेगा, तो ज़रूर कुछ न कुछ उसमें अपनी तरफ़ से घटा बढ़ा देगा। इसी तरह से जितने अधिक आदमियों में बात जायगी, उतना ही अधिक फेर बात में हो जायगा। होते होते यहाँ तक हो जाना सम्भव है कि यद्यपि कहनेवाले ने, जिसे दोषी ठहराया जाता है, बात मित्रता से कही हो, परन्तु सुनने वाले उससे यहाँ तक बुरा माने कि वे उसके कट्टर शत्रु बन जाएँ। यह सब अंध-विश्वास के कारण है। यदि दूसरे की बात को सुन कर एक दम उस पर विश्वास न कर लो, किंतु उस पर विचार करो, तो यह बुराई पैदा ही नहीं हो सकती, परन्तु आपत्ति यह है कि जहाँ किसी ने तुम्हारे सामने आकर कहा कि अमुक मनुष्य तुम्हारी बुराई करता था, बस फिर क्या था, जामे से बाहर हो गए और क्रोध में लाल पीले हो गये। तुमने क्षण भर भी इस बात पर विचार नहीं किया कि वह मनुष्य मेरी बुराई क्यो कर रहा था और बुराई करने का कोई कारण भी है या नहीं। तुम व्यर्थ में दूसरे के कहने से अपने को दुखी करते हो और दूसरे को दोष देते हो। असिल बात यह है कि तुम स्वयं अपने लिये दुख के कारण हो। तुम दूसरे की बात को सुन कर एक दम उसे सच समझ बैठते हो। यही कारण है कि तुम दुखी रहते हो। सच्चा धर्मात्मा मनुष्य चाहे

कोई उसके सामने आकर कुछ भी कहे, कभी विश्वास नहीं करता। इसका मुख्य कारण यह है कि वह कभी किसी की बुराई नहीं करता। बुराई सुन कर वह मनुष्य बुरा मानता है, जो दूसरो की बुराई करता है। जो मनुष्य दूसरो की बुराई नहीं करता, चाहे उसके सामने चाहे पीछे लोग उसकी कितनी ही बुराई करे उसके दिल पर कोई असर नहीं होता। यहाँ तक कि जिन लोगों को भड़काने की आदत होती है, जब उनकी उसके आगे दाल नहीं गलता, तो वे कुछ बुरा भी मान जाते है। और उसकी निंदा तक करने लगते है, परन्तु वह किसी बात की परवा नहीं करता, कारण कि वह जानता है कि जब तक मैं कोई बुराई का काम न करूँगा, तब तक मुझे कोई हानि नहीं हो सकती। दूसरे लोग जो मेरी बुराई करते हैं, वे मेरा कुछ नहीं बिगाड़ते। मेरी बुराई करके वे अपने को ही हानि पहुँचाते हैं। वह इन्हीं विचारो के कारण सदा शांत रहता है। अशांति का कभी लेश भी उसमें नहीं होता। उसका सिद्धांत सदैव यह रहता है कि यदि तू भला है तो चाहे लोग तेरी कितनी ही बुराई करे तो भी तू बुरा नहीं है, परन्तु यदि वास्तव में तू बुरा है और लोग तुझे बुरा कहते हैं, तो इसमें आश्चर्य क्या है? लोग सच कहते है, फिर उनके कहने से बुरा क्यो मानता है? ऐसा मनुष्य प्रत्येक अवस्था में सुखी रहता है और वही मनुष्य सच्चा कहलाता है।

पवित्र और नियमनिष्ठ जीवन के लिये सच बोलना सब से पहिला कर्त्तव्य है। यदि किसी मनुष्य को पवित्र जीवन की अभिलाषा है, और वह संसार के दुःखों को कम करना चाहता है, तो उसे उचित है कि वह झूठ बोलना और दूसरों की बुराई

करना छोड़ दे, यहाँ तक कि झूठ बोलने और बुराई करने के विचार भी मन में न लावे और न कभी दूसरे के मुँह से ऐसे शब्दों को सुने। उसे बुराई करनेवाले पर यह सोच कर दया करनी चाहिये कि देखो यह आदमी कैसा मूर्ख है। व्यर्थ में दूसरे की बुराई करके अपने को दुख और कष्ट में डालता है, कारण कि झूठा आदमी कभी सत्य के आनंद को नहीं जानता और दूसरे की निंदा करने वाला मनुष्य कभी शांति के साम्राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता।

जो वचन मनुष्य अपने मुँह से निकालता है, उनसे उसकी आध्यात्मिक अवस्था प्रगट होती है और उन्हीं से अंत में उसका फ़ैसला किया जाता है। बाइबिल में लिखा है कि तेरे वचनो से ही तुझे सज़ा और जज़ा दी जायगी, अर्थात् यदि तू सच बोलेगा तो तुझे इनाम दिया जायगा और यदि झूठ बोलेगा तो सज़ा दी जायगी।

५--चित्त की शान्ति ।

जो मनुष्य अपने चित्त को चंचल चलायमान रखता है और जो घटनाओ की लहरो में बह जाता है, अर्थात् जिस मनुष्य के विचार स्थिर नहीं है, उसे कभी शांति नहीं मिल सकती ।

विचारशील मनुष्य में कषाय-वासना नहीं पाई जाती। वह सब से निष्पक्ष होकर शांत चित्त से मिलता है। पक्षपात उससे कोसो दूर रहता है। कषाय वासना को उसने सवथा त्याग दिया है। स्वार्थ की उसमें गंध नहीं रही है। सम्पूर्ण ससार से वह प्रेम और सहानुभूति रखता है।

जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह सदा यह समझता रहता है कि जो कुछ मेरी राय है और जो मेरा पक्ष है वही सच है, अन्य सब झूठे है। वह इतना भी नहीं विचार सकता है कि दूसरे की सम्मति और पक्ष मे कुछ सार है कि नहीं। वह निरंतर अपनी रक्षा करने और दूसरे पर आक्रमण करन क विचार में ही लगा रहता है। शांति और साम्य भाव का उसमे अंश भी नहीं होता।

शांत चित्त मनुष्य पक्षपात और कषाय वासना का अपने मन में प्रवेश भी नहीं होने देता। वह सदा उनकी परिछाई तक

से बचने का उद्योग करता रहता है। ऐसा करने से उसमें दूसरों के लिये सहानुभूति की मात्रा बढ़ने लगती है और वह उनके चित्त की अवस्था को जानने लगता है। ज्यो ज्यों उसे दूसरो का ज्ञान होता जाता है, त्यो त्यो वह इस बात को समझने लगता है कि मै व्यर्थ में दूसरो को दोषी ठहराता हूँ और उन्हे घृणा की दृष्टि से देखता हूँ, यह मेरी सरासर मूर्खता है। इस प्रकार उसके हृदय मे प्राणी मात्र के प्रति प्रेम और उदारता का भाव प्रादुर्भूत होने लगता है। संसार मे जितने भी जीव है वे सब उसके प्रेमपात्र बन जाते है।

जब मनुष्य स्वार्थ और कषाय वासना के वशीभूत होता है, तो उसके ज्ञान-चक्षु मुँद जाते है। उन पर अज्ञानता का पर्दा पड़ जाता है। उसको केवल अपने ही पक्ष में भलाई मालूम होती है। दूसरे का पक्ष उसे सर्वथा झूठा प्रतीत होता है, जिसका यह परिणाम होता है कि उसे किसी वस्तु का भी वास्तविक ज्ञान नहीं होता, यहाँ तक कि वह अपनी अवस्था से भी अनभिज्ञ होता है। फिर जब उसे अपना ही ज्ञान नहीं होता तब दूसरो के हृदय की बात को कैसे जान सकता है। वह दूसरो की निंदा करने में ही भलाई समझता है। उसके हृदय में उन मनुष्यो के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है जो उसके पक्ष में नहीं होते हैं और जिनके विचार उससे नहीं मिलते। परिणाम यह होता है कि वह सबसे दूर और अलग रहता है और अपने कलुषित मन के कुत्सित विचरो में डूबा रहता है।

शांत चित्त मनुष्य का समय बड़े सुख और आनंद से व्यतीत होता है। बुद्धिबल से वह घृणा, द्वेष, शोक और संताप के मार्गों

का परित्याग करता है और प्रेम, स्नेह, सुख और शांति के मार्गों का अवलम्बन करता है। जीवन की दैनिक घटनाएँ उसे हानि नहीं पहुँचा सकतीं। जिन वस्तुओं को मनुष्य दुखदाई समझते हैं, परंतु जो साधारणतया सब मनुष्यों को भुगतनी पड़ती हैं, वे उसे दुःख नहीं पहुँचा सकतीं। न उसे सफलता से अधिक हर्ष होता है और न असफलता से अधिक दुख। न उसमें व्यर्थ की स्वार्थयुक्त इच्छाएँ होती हैं और न बालकों जैसी निराशाएँ।

अब प्रश्न यह है कि यह साम्य भाव अर्थात् मन और जीवन की सर्वोत्कृष्ट अवस्था किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है? इसका केवल एक उपाय है और वह यह कि इन्द्रियों को दमन किया जाय और हृदय को विशुद्ध बनाया जाय। हृदय की विशुद्धि से सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति होती है। सम्यक् ज्ञान से साम्य भाव की उत्पत्ति होती है और साम्यभाव से शांति मिलती है। जिस मनुष्य का हृदय विशुद्ध नहीं है वह कषाय वासना की लहरों में असहाय बह जाता है, परंतु विशुद्ध हृदय मनुष्य शांति के बन्दरगाह में निवास करता है।

६—शुभ परिणाम ।

हमारे जीवन की बहुत सी घटनाये हमारी इच्छा के बिना ही देखने मे आती हैं, जिनका बाह्य मे हमारे मन और स्वभाव से कुछ भी सम्बध नहीं होता। ऐसी अकारण घटनाओ को हम दैवी घटनायें कहा करते है। इसी कारण एक मनुष्य दुनिया में भाग्य-वान् और दूसरा अभागा कहलाता है। सारांश यह है कि दुनिया मे बहुत से आदमियो को वे चीज मिल जाती हैं, जिनके लिये उन्होंने कभी उद्योग नहीं किया और बहुत से आदमियो के पास से वे चीज भी जाती रहती है, जिनके लिये उन्होने रात दिन जी जान से परिश्रम किया। पहले प्रकार के आद-मियो को लोग भाग्यवान् और दूसरे प्रकार के लोगो को अभागा कहा करते हैं, परंतु सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने और जीवन पर दिव्यदृष्टि डालने से ज्ञान होता है कि बिना कारण के संसार में कोई भी कार्य नहीं होता और कारण और कार्य का अत्यंत घनिष्ठ सम्बंध है। जब यह बात है तो प्रत्येक घटना का जो हमारे जीवन में उपस्थित होती है, हमारे मन और स्वभाव से घनिष्ट सम्बंध है और निश्चय से उसका कारण हमारे अंदर मौजूद है। भावार्थ जिन घटनाओ को हम दैवी घटनाये समझ रहे हैं, वे हमारे ही विचारो और कार्यों का परिणाम हैं। निस्संदेह यह बात प्रत्यक्ष नहीं है, परंतु भौतिक संसार तक का कौन सा सिद्धांत ऐसा प्रत्यक्ष है? जिस प्रकार विचार अनुसंधान

और प्रत्यक्ष प्रमाण उन सिद्धांतों के आविष्कार के लिये आवश्यक हैं, जो एक परमाणु का दूसरे परमाणु मे सम्बंध बतलाते हैं, उसी प्रकार वे उस कार्य प्रणाली के समझने और 'जानने के लिये भी आवश्यक हैं जो एक मानसिक अवस्था का दूसरी अवस्था में सम्बंध बताती है और ऐसे ढंग और नियम उन लोगो को स्वयं मालूम होने हैं जो अच्छे काम करनेवाले होते हैं और अच्छे कामो के अभ्यास क कारण जिन्हे समझने की शक्ति हो जाती है ।

हम वही काटते है जो बोते है । हमें वही मिलना है जिसके लिये हम उद्योग करते है । यह सम्भव है कि हम किसी पदार्थ की इच्छा न करते हों ; परतु बिना जाने बूझे उसके लिये श्रम कर रहे हो और वह हमें मिल जाय । शराबी आदमी पागल बनना नहीं चाहता, परंतु वह ऐसा काम करता है जिससे पागल हो जाता है । इस उदाहरण से यह बात अच्छी तरह से समझ में आ जायगी कि संसार मे कोई भी कार्य बिना कारण के नहीं होता । प्रत्येक कार्य का कारण होता है । तुम्हारे सुख दुख का कारण तुम्हारे ही अदर विद्यमान है, कहीं बाहर नहीं है । अतएव यदि तुम अपने विचारो में परिवर्तन कर दोगे, तो बाह्य घटनाये तुम्हे क्लेश न पहुंचा सकेगी । तुम्हारा हृदय विशुद्ध और पवित्र बन जायगा । संसार के सम्पूर्ण पदार्थ तुम्हारे लिये शुभ रूप हो जायँगे और जीवन की समस्त घटनाये सुखदायक हो जाएँगी ।

जीवन का अच्छा बुरा होना, स्वतन्त्र और परतंत्र होना विचारो पर निर्भर है । जैसे मनुष्य के विचार होगे, अच्छे या

बुरे, उन्हीं के अनुसार उसका जीवन होगा, कारण कि जितने भी कार्य मनुष्य करता है, वे सब उसके विचारानुकूल होते हैं। जैसी मन में भावना होती है, जैसी इच्छा होती है, वैसे ही कार्य होते है। काम के करने से पहले उसके करने का मन में विचार होता हैं। कोई काम बिना विचार के नहीं होता। फिर जैसे कार्य होते हैं, उन्हीं के अनुसार फल मिलता है। बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता। अतएव जब तक मन में उत्तम विचार न होगे, तब तक उत्तम कार्य नहीं हो सकते और जब तक उत्तम कार्य न होगे, तब तक उनसे उत्तम फल की आशा नहीं की जा सकती।

ऐसे दुनिया में बहुत से आदमी हैं जो रात दिन धन सम्पदा और सुख ऐश्वर्य के लिये उद्योग करते रहते हैं, परन्तु उन्हे ये वस्तुयें नहीं मिलतीं और ऐसे बहुत से आदमी नित्य उनके देखने में आते है, जिन्हे ये सब वस्तुय योंही बिना किसी प्रकार के श्रम और उद्योग के मिल जाती है। इसका क्या कारण है? क्या श्रम और उद्योग करने वाला मनुष्य असफल रहता है और उद्योग न करने वाले मनुष्य को सफलता प्राप्त हो जाती है? नहीं, कदापि नहीं। वास्तव में इसका कारण यह है कि जिन मनुष्यो को सफलता नहीं होती, वे स्वयं अपने मे ऐसे कारण उपस्थित कर लेते हैं जो उनकी इच्छाओ की पूर्ति नहीं होने देते।

मनुष्य के जीवन में कार्य कारण का और उद्योग और परिणाम का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बंध है और शुभ परिणाम तभी प्राप्त हो सकते हैं, जब कि उत्तम रूप से उद्योग किया जाय

और उत्तम कारण उपस्थित किये जाएँ। जो मनुष्य उत्तम कार्य करता है और उन उपायो का अवलम्बन करता है कि जो सदुद्दश्यो पर निर्धारित है, उसे शुभ परिणामो के लिये तनिक भी श्रम या उद्योग नहीं करना पड़ेगा, कारण कि वे स्वयं ही उसके पास उसके सुकार्यों के फल स्वरूप उपस्थित हो जायगे। मनुष्य को उसके ही कार्यों का फल मिलता है। यदि कार्य अच्छे हैं तो उसे सुख और शांति मिलेगी, यदि बुरे है तो दुख और अशांति।

जैसा बोओगे वैसा काटोगे, जैसे काम करोगे, अच्छे या बुरे, उन्हीं के अनुसार फल मिलेगा, यद्यपि यह सिद्धांत नैतिक जगत् में बड़ा सरल है, तथापि लोग इसके समझने और स्वीकार करने में संकोच करते है। एक विद्वान् का कथन है कि वही मनुष्य प्रकाश के गुण को अच्छी तरह समझ सकता है, कि जो कुछ काल तक अंधकार मे रहा है। दुनिया में जिसने न कुछ बोया है और न कुछ लगाया है, वह काटने और खाने की क्या आशा कर सकता है अथवा जिसने जौ बोया है, वह गेहूँ कैसे पा सकता है ? पृथिवी में जैसा मनुष्य बीज डालता है, उसके ही अनुसार फल लगता है। यही प्रकृति का नियम है। ठीक यही दशा मनुष्य की मानसिक और आत्मिक भूमि की है। बहुत से मनुष्य बुराई करते है, परंतु उससे भलाई की आशा रखते है और जब बुराई का बीज फलता है और बुराई का परिणाम बुरा होता है तो हताश होकर रोने और अपने भाग्य को उलाहना देने लगते है कि हाय हमारे भाग्य में यही बदा था, हमारे कर्मो मे यही दुख देखना था। कभी कभी तो यह भी देखने मे आता है कि वे अपने बुरे भाग्य को दूसरों

के सिर मंढ़ते हैं, अर्थात् यह कहते हैं कि दूसरों के बुरे कर्मों के कारण हमको यह दुख उठाना पड़ा। वे इस बात को स्वीकार तक भी नहीं करते कि सम्भव है कि जो दुख हमें उठाना पड़ रहा है, उसका कारण हमारे ही वे विचार और कार्य हो जिनका हमें बोध नहीं। जो लोग अपने जीवन को उत्कृष्ट और सुखदाई बनाने के लिये उत्तम जीवन के मूल सिद्धांतो की जोह में लगे रहते है, उन्हे उचित है कि जिस प्रकार बाग़ का माली बीज बोने और काटने के नियम का पूर्ण ध्यान रखता है, अर्थात् इस बात को अच्छी तरह समझता है कि कब बोना चाहिये और कब काटना चाहिये, तथा क्या बोना चाहिये और क्या काटना चाहिये उसी प्रकार वे भी अपने मन, वचन, काय के प्रयोग में कार्य कारण के अविनाभावी नियम का अच्छी तरह से ध्यान रक्खे। जिस प्रकार माली अपने बाग़ में बुद्धिमानी से काम करता है, उसी प्रकार मनुष्य को अपने मानसिक बाग़ में काम करना चाहिये। जब मनुष्य को इस बात का अच्छी तरह से बोध हो जायगा कि जैसा बीज बोओगे वैसा फल लगेगा और जैसा काम करोगे, वैसा फल मिलेगा, तब वह उन कामो को स्वयं करने लगेगा जिनसे उसे भी सुख मिलेगा और दूसरो का भी उपकार होगा। जिस प्रकार स्थूल जगत् में लोग जड़ पदार्थों के नियमो का पालन करते हैं, उसी प्रकार आत्मिक जगत् में भी आत्मिक नियमो का पालन करना चाहिये, कारण कि जड़ और आत्मा के नियम एक ही हैं। दोनों एक ही वस्तु हैं, परंतु दो रूप में हैं और भिन्न भिन्न काम कर रही हैं।

यदि हम सद्उद्देश्यों के अनुसार काम करेंगे और कारण कार्य का विचार रक्खेंगे, तो कदापि बुरा परिणाम न होगा। यदि

हम उत्तम और समीचीन रीति से कार्य करेंगे तो हमारे जीवन में स्वप्न में भी बाधा नहीं पहुँच सकती और संसार की कोई भी वस्तु हमारे चरित्र को दूषित नहीं कर सकती । हमारा जीवन पूर्ण रूप से सुखी होगा और हमारा चरित्र दृढ़ नींव पर स्थित होगा । यदि हम सत्कार्य करेंगे तो उनका परिणाम अच्छा ही होगा । तदि कोई यह कहे कि अच्छे कारणो से बुरे कार्यों की उत्पत्ति होती है, तो उसका यह कहना ऐसा ही है, जैसा कि यह कहना कि अनाज बोने से काँटे पैदा होते हैं ।

सारांश यह है कि जिन मूल सिद्धांतो का मैं ने इस पुस्तक मे संक्षेप में वर्णन किया है, यदि कोई मनुष्य उनके अनुसार प्रवृत्ति करे, तो वह उस आत्मिक अवस्था को प्राप्त कर लेगा जहाँ उसको स्थायी सुख और पूर्ण शांति मिलेगी और उसके सम्पूर्ण उद्योग सफलीभूत हो जायँगे । यह सम्भव है कि वह लखपति या करोड़पति न बन सके और वास्तव में ऐसा बनने की उसे इच्छा तक भी नहीं होती, परतु इसमें संदेह नहीं कि वह शांति को प्राप्त कर लेगा और सफलता उसे मिल जायगी । जिस मनुष्य ने शांति और सफलता को प्राप्त कर लिया, उसे मानो संसार की सम्पूर्ण वस्तुएँ मिल गई । उसके सामने धन सम्पदा कुछ भी नहीं है ।

सद्विचार पुस्तक माला की प्रकाशित पुस्तकें।

१. शांति-मार्ग।

यह पुस्तक अँग्रेज़ी के प्रसिद्ध विद्वान् जेम्स एलन की एक पुस्तक का अनुवाद है। इस पुस्तक में शांति-मार्ग का निरूपण किया गया है। विषय-वासना रूपी नरककुण्ड में पड़े हुए मनुष्य को यह पुस्तक वहाँ से निकाल कर मोक्ष-मार्ग पर लगा देती है। इसके पढ़ने से पतित से पतित मनुष्य भी उच्चतम अवस्था को प्राप्त कर सकता है। जिन लोगो का समय रात दिन सांसारिक दुःखो मे व्यतीत होता है, जो शांति-मार्ग से कोसो दूर है, उनके लिये यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। मूल्य ≋)

२. आत्म-रहस्य।

यह भी जेम्स एलन की एक पुस्तक का अनुवाद है। किन किन दुर्गुणो के कारण मनुष्य संसार में दुःख उठाता है और किन किन सद्गुणो से वह उन दुःखो को दूर करके आत्मोन्नति कर सकता है, इसी का इस पुस्तक मे विशद रूप से वर्णन किया गया है। आत्मोन्नति के इच्छुको के लिये यह पुस्तक एक अमूल्य रत्न है। विलायत में इस पुस्तक की हज़ारो प्रतियाँ बिक चुकी हैं। मूल्य ≋)

३. जैसे चाहो वैसे बन जाओ।

यह भी जेम्स एलन की एक पुस्तक का अनुवाद है। इस पुस्तक का जैसा नाम है वैसा ही इसका गुण है। वास्तव में इसके पढ़ने से और इसके अनुसार प्रवृत्ति करने से निर्धन से निर्धन मनुष्य धनवान् और मूर्ख से मूर्ख बुद्धिमान तथा निर्बल से निर्बल मनुष्य बलवान् बन सकता है। मूल्य ≋)॥

४. सुख और सफलता के मूल सिद्धान्त।

यह भी जेम्स एलन की एक पुस्तक का अनुवाद है। इस पुस्तक में उन सिद्धांतो का उल्लेख किया गया जिनसे सुख और सफलता प्राप्त होती है और दुःख और निराशा का काला मुँह होता है। मूल्य ≈)॥

सद्विचार सम्बन्धी अन्य पुस्तकें।

१. चरित्र-गठन मनोबल।

यह पुस्तक प्रसिद्ध अमेरिकन विद्वान् राल्फ वाल्डो ट्राइन की एक पुस्तक का अनुवाद है। इसमें इस बात को अच्छी तरह से दिखलाया गया है कि मनुष्य अपने चरित्र को जैसा चाहे वैसा बना सकता है। मूल्य ≈)॥

२. राजपथ का पथिक।

यह पुस्तक भी ट्राइन महोदय की एक पुस्तक का अनुवाद है। इसके पढ़ने से मनुष्य के विचार क्षुद्रता से उच्चता के, अपवित्रता से पवित्रता के, अशांति से शांति के और दुःख से सुख के क्षेत्र में विचरण करने लगेंगे और जो इसके अनुसार आचरण भी करने लगेगा उसका जीवन तो सुखी और आनंदी हो बन जायगा। मूल्य ।-)

३. युवाओं को उपदेश।

यह काबेट साहब की अँग्रेज़ी पुस्तक का अनुवाद है। अँग्रेज़ी में इस पुस्तक का बड़ा मान है। इस पुस्तक में जो अभी अभी युवा हुए हैं, जो पढ़ रहे हैं, जो विवाह करनेवाले हैं, जिनकी स्त्री आ चुकी है, जो पिता बननेवाले हैं या बन चुके हैं उन सबके लिये बहुत ही अच्छे अच्छे उपदेश दिये हैं। मूल्य ॥≈)